P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-1) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी विमर्श

शम्भुलाल मीना
सहआचार्य,
हिन्दी विभाग,
राजकीय कला महाविद्यालय,
दौसा, राजस्थान, भारत

सारांश

मैत्रेयी पुष्पा स्त्री–पुरूष संबंधों में समानता की पक्षधर है। उनका मानना है कि स्त्री–पुरूष को एक दूसरे का सहयोगी बनना चाहिए। स्त्री केवल वंश वृद्धि का साधन मात्र न होकर एक बौद्धिक चेतना भी है। स्त्री की स्वतंत्रता, इच्छा और अस्मिता का ध्यान रखना चाहिए । पुरूष में मालिक का भाव होता है, इस कारण औरत के साथ भी वह दोयम दर्जे का व्यवहार करता है। मैत्रेयी को नारी स्वातंत्र्य के संस्कार परिवार से मिले थे। मैत्रेयी की माँ कस्तूरी भी स्वतंत्र विचारों की महिला थी। मैत्रेयी का मानना है कि जिस दिन पुरूष स्त्री को अपनी सम्पत्ति मानना बंद कर देगा, उस दिन घरेलू हिंसा से औरत को मुक्ति मिल जायेगी। चाक की 'सारंग' अल्मा कबूतरी की 'अल्मा' विजन की डॉ0 नेहा शरण आदि पात्र नारी स्वातंत्र्य पर बल देते है। मैत्रेयी पुष्पा ग्रामीण पृष्ठभूमि की होते हुए भी अपनी बात बिना किसी लागलपेट के स्वतंत्रता पूर्वक कहती है। उनके मतानुसार कस्तूरी की गंध स्त्री और पुरूष की समकक्षता की नाभि में निवास करती है। मैत्रेयी पुष्पा के मतानुसार महिला परिवार तो चाहती है लेकिन उसमें स्वतन्त्रता हो। वह अपनी इच्छानुसार काम कर सके। लेखिका अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी को पुरूष के समकक्ष दर्जा दिलाना चाहती है।

मुख्य शब्द : कबूतरी, झूलानट, कस्तूरी, फाग, इदन्नमम, जौहर, कड़ियल।

प्रस्तावना

मैत्रेयी पुष्पा हिन्दी की चर्चित नारी लेखिका है। इन्होंने अपनी बाल्यावस्था से नारी की दयनीय स्थिति को ग्रामीण परिवेश में देखा। अपनी विधवा माँ के जीवन संघर्ष और पितृहीन होने के कारण लेखिका को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा । संयोग से डॉ0 पति मिलने पर भी भीतर का लेखक अपने आप को व्यक्त करने का अवसर देख रहा था। 3 बेटियों के कहने पर ही लेखन कार्य शुरू किया। हंस के सम्पादक राजेन्द्र यादव की प्रेरणा से इनका लेखन निरन्तर परिपक्व होता रहा। इन्होंने अपने लेखन में समाज की परम्परागत मान्यताओं के विरूद्ध नारी को पुरूष के समकक्ष दर्जा दिलाने का प्रयास किया है। नारी को पति नहीं साथी चाहिए। उसे प्रेम और लोकतांत्रिक वातावरण मिलना चाहिए। उसे समाज में सम्मानजनक रूप से जीने का हक मिलना चाहिए। अपनी लेखनी के माध्यम से उन्होंनेनारी स्वातंत्र्य पर बल दिया है।

आजादी के बाद महिलाओं की स्थिति में निरंतर बदलाव आ रहा है। राजाराम मोहनराय, स्वामीदयानंद सरस्वती, ज्योतिबा फुले और सावित्री बाई फुले ने महिला शिक्षा पर बल दिया और उसे पुरूष के समक्ष सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों की वकालात की।

मैत्रेयी पुष्पा स्त्री–पुरूष संबंधों में समानता की पक्षधर है – वह कहती है 'पुरूष के विरूद्ध मैं कभी नहीं थी। मैं तो सहयोगी पुरूष चाहती थी। ....मैंने शादी के शुरूआती दिनों में अपने पति को पत्र लिखा कि मैंने यह शादी कोई उमंग–तरंग में नहीं की है, बल्कि इसलिए की है कि मुझे पति नहीं सखा चाहिए।'

मैत्रेयी ने स्त्री होकर उसकी मनःस्थिति का यथार्थ चित्रण किया है। प्रेम महिला की स्वाभाविक प्रवृति है। मैत्रेयी ने एक–एक करके तीन पुत्रियों को जन्म दिया तो लोग अभागी कहने लगे किन्तु मैत्रेयी की सोच सकारात्मक थी। वह लड़के और लड़की में भेद–भाव नहीं करती थी। लड़कियों के कहने पर उन्होंने लेखन आरम्भ किया। धीरे–धीरे 'हंस' के सम्पादक राजेन्द्र यादव से सम्पर्क हुआ और लेखन को प्रभावी बनाने की प्रेरणा मिली।

इदन्नमम', 'चाक' 'कही ईसुरी फाग' 'अल्मा कबूतरी' 'झूलानट' 'अगिन पाँखी' 'कस्तूरी कुंडल बसै 'विजन' 'गोमा हँसती हैं' गुड़िया भीतर गुड़िया आदि रचनाएं की। 'निद्रा, भय, मैथुन, आहार' ये पुरूष–स्त्री की समान आवश्यकताएँ है। 'कस्तूरी कुंडल बसे' उपन्यास में मैत्रेयी ने अपने व्यक्तिगत वैवाहिक जीवन के प्रसंगों का उल्लेख कर अपनी स्वतंत्र लेखन की प्रवृत्ति का परिचय दिया है। उनके उपन्यास बेटी, दामाद, पति ने पढ़े है। मैत्रेय ने बिना भाई व पिता के अपना जीवन नौकर की तरह व्यतीत किया है और कई बार देह के साथ खिलवाड़ की नौबत भी आयी है।

'मैत्रेयी पुष्पा का मन ग्रामीण परिवेश को साहित्य में अधिक महत्त्व देता है। डॉ0 राजेन्द्र यादव ने कहा है– मैत्रेयी के पास ऐसे अनुभव थे, जिन पर मध्यवर्गीय महिलाएं सोच भी नहीं सकती थीं। उन पीड़ित महिलाओं पर गहराई, संवेदना, समझ के साथ लगातार लिखने वाली पहली महिला लेखिका मैत्रेयी है। गाँव के जीवन और संघर्ष को केन्द्र बनाकर ही उसकी कथा रचनाएँ हैं।"[1] मैत्रेयी अलीगढ़ की रहने वाली है। बचपन में पिता की मृत्यु के बाद माँ ने उसका पालन–पोषण किया। ब्राह्मण और यादव संस्कृतियों से उसका जुड़ाव रहा। मैत्रेयी बाहर से शालीन होने के बावजूद भीतर से दृढ़ है। जो तय कर लेती है,उसे पूरा करती है। निचले तबकों को लेकर जीवन की गहराई में उतर, साधारणीकरण के साथ लिखने वाली पहली लेखिका मैत्रेयी है। अपराधी जाति की दबंग लड़की, 'अल्मा' पर लिखा गया उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' तो चौंकाने वाली रचना है। मैत्रेयी का गाँव–कस्बे से संबंध आज भी बना हुआ है। वह गाँव जाकर लोगों से मिलती–जुलती है। आजादी के बाद गाँवों की बदहाली मैत्रेयी को बेचैन किए रहती है।

मैत्रेयी का मानना है कि स्त्री भोग का सामान भर नहीं है। वंशवृद्धि के लिए खेत–भर नहीं है, वह हाड़–माँस की एक चेतना भी है और उसमें भी वहीं बौद्धिक क्षमता होती है जो कि और जैसी कि पुरूष में वह अब तक मानी जाती है ।'[2] उनके लिए स्त्री विमर्श का अर्थ स्त्री की स्वतंत्रता, इच्छा और अस्मिता है।

'इदन्नमम' से लेकर 'चाक' 'अल्मा' कबूतरी और कहीं ईसुरी फाग लिख चुकने बाद कस्तुरी कुंडल बसै में उन्होंने स्त्री जैसा आत्मदर्शन किया है, वह आत्मकथा के बहाने आत्म–विमर्श भी है। यह आत्म विमर्श उस स्त्री का भी है जो बेटी तो है, लेकिन जिसके आगे–पीछे माँ–पिता, रिश्ते–नाते, प्रेमी–पति और पुत्र–पुत्रियाँ हैं इससे यह भी समझ में आता है कि मैत्रेयी का स्त्री विमर्श, परिवार विमर्श भी है और समाज विमर्श भी। वह परम्परा विमर्श अगर है तो आधुनिकता और इतिहास विमर्श भी है। '[3]

साहित्य समाज के आगे चलने वाली मशाल है। मैत्रेयी के अनुसार गांव की स्त्रियों में हिम्मत और हौंसला होता है। मैत्रेयी भी ग्रामीण परिवेश की होने के कारण उनकी चिट्ठी में दाम्पत्य जीवन के बारे में एक वाक्य मिलता है–"कि मैंने तो साथी–सखा ढूँढा था। तुम तो मालिक हो गए।" इसका मतलब यह है कि उन्होंने पति को अपने समकक्ष जीवन साथी के रूप में मान्यता दी। मैत्रेयी की माँ भी साहसी थी। वह अपनी माँ की मृत्यु के पश्चात् वकील से बात कर अपनी जमीन बचाना पहला हक समझती थी। मैत्रेयी को राजेन्द्र यादव द्वारा रचना में सुधार हेतु बार–बार लौटाने पर भी हर बार साहस से पुनः लिखना लगन का परिचायक है। लेखिका को अपनी रचना छपने से प्रसन्नता की अनुभूति होती है। 'चाक' उपन्यास की कलावती व सारंग में उन्होंने स्त्री के सशक्तिकरण रूप को प्रस्तुत किया है। "औरत अपने जीवन में प्रेम को आधार बनाती है, प्रेम ही उसका मकसद होता है।.....सहयोग के बिना समानता की सामाजिकता कैसे बनेगी ? मैं यही कहना चाहती हूँ कि अब जरा धैर्य धरकर स्त्री के नजरिए से परम्परा बनने दो, उसकी अपनी राय की जगह होने दो। इस बंद–बंद समाज को सही अर्थों में खुलने दो।"[4] बिना विवाह के माता–पिता भी लड़की को कुछ नहीं देते। पिता जिस दिन बेटी को अपनी सम्पत्ति में हिस्सा देगा, जिस दिन पत्नी की कमाई को पति उसके अपने मन से खरचने देगा, जिस दिन पुरूष स्त्री को अपनी संपत्ति मानना बंद कर देगा। उस दिन घरेलू हिंसा से औरत मुक्त हो जाएगी।

इदन्नमय–(1998)– उपन्यास की नाभि मंदा (मंदाकिनी), उसकी बाल सहेली सुगना और दिलेर कुसुना लगभग अघोषित तौर पर संगठित होकर लड़ती हैं।

मैत्रेयी पुष्पा ने बीसवीं सदी के हिन्दी लेखन में नारी के अबलत्व और उसकी निरीह "रागमयता" के अंध स्वीकार और बेशर्त समर्पण को नकारते हुए राष्ट्रकवि और कामायनीकार दोनो को ही काफी पीछे छोड़ दिया है। कुसुम और दाऊजी (अमरसिंह) के अनैतिक संबंधों के प्रसंगों में मानस की बहुपरिचित पंक्तियों–अनुज वधू भगिनी सुत नारी, सुनि, सठ कन्या सम ये चारी से भिड़ते और टकराते हुए जिस तरह के तर्क मंदा और कुसुमा के बहाने दिये हैं उससे पुरूष प्रणीत व्यवस्था और वर्चस्व पर सीधा हमला होता है।'

'इदन्नमम्' जितना आधुनिक जीवन तथा आधुनिक विकास के प्रति आलोचनात्मक है, उतना ही परम्परागत भारतीय जीवन के प्रति भी आलोचनात्मक हैं। यह भारतीय गाँव की विडंबनाओं का, गाँव के विद्रोह का लगभग महाकाव्यात्मक आख्यान है, किंतु इसमें गाँव का झूठा आदर्शीकरण नहीं किया गया है। '[5]

'चोक' सारंग की लड़ाई सामाजिक मुक्ति की लड़ाई है। सारंग की बहिन रेशम विधवा, होकर संतान को जन्म देने का प्रयास करती है। सारंग को शिक्षित पति रंजीत ने भरपूर आश्वासन दिया था कि वह सारंग की लड़ाई लड़ेगा। चाक एक ग्राम कथा है। चाक एक नारी कथा है। गाँव की समस्या पर शहरी मध्यम वर्ग द्वारा काल्पनिक समाधान प्रस्तुत करने वाला यह एक प्रयोगवादी उपन्यास है।'[6]

चाक भारतीय संस्कृति, स्त्री मर्यादा और नैतिक पाखंड के प्रवचनों की असलियत से वह परिचित है।" गुरू कुल के वातावरण में रोज व रोज होने वाली यौन संबंधो के हादसे भी उसकी स्मृति को आच्छन्न किए हुए है। तभी से वह यह भी जानती है कि ऐसे संबंधों के भंडा फोड़ के बाद सारा दंड स्त्री को ही दिया जाता है। वह स्वयं इन घटनाओं के बीच एक छोटे–मोटे संघर्ष की अगुवाई भी कर चुकी है ।[7]

'सारंग' शिक्षित होते हुए भी गृह–गृहस्थी के जाल में ऐसी फंस गई कि – गृहिणी का फर्ज निभाते हुई तारीफें लूटती रही। 'नतीजा यह हुआ कि पढ़ने–लिखने की आदत तक बीते जमाने की बात हो गई है।"[8] उसने अपने आप को इस तरह बदल डाला कि वह पढ़ी लिखी नहीं है। वह कहती है– कोई कहता है कभी यज्ञ किया होगा मैंने ? मंत्र–'लोक बोले होंगे–'सत्यार्थ प्रकाश रटा होगा?' अभिज्ञान शाकुंतलम' और 'कुमार संभव' पढ़े होंगे? यह घूँघटवाली औरत रंजीत की बहू है, सारंग नहीं ।'[9]

'चाक' की स्त्रियों के जिजीविषा के संघर्ष में अनेक लोग शामिल है। मनोहरलाल की बहू की दर्दनाक हालत पर श्रीधर की यह टिप्पणी उल्लेखनीय है कि 'जिरौरी वाली की यातना व्यर्थ नहीं जायेगी।' लपटे भी उठेगी, जो छीन लेंगी अपने हक को।'[10]

सारंग की श्रीघर से अंतरंगता एक नये संबंध को जन्म देती है। सारंग का चुनाव के लिए पर्चा भरना उसके विद्रोही व्यक्तित्व की मिशाल बन जाता है। सारे गाँव में यही चर्चा है : 'रंजीत की बहू पर्चा भर आई है। खसम को तो हवा भी नहीं लगने दी। जुलम पल्लौ। कलयुग की मार।[11]

रंजीत सारंग से पर्चा वापिस लेने का आग्रह करता है। रूपये–पैसे का लालच भी देता है। पर सारंग टस से मस नहीं होती । वह पूरे आत्म विश्वास और दमखम के साथ कहती है' मैं चाहकर भी पीछे नहीं लौट सकती।[12] समाज की सोच में धीरे–धीरे बदलाव आता है। चाक फिरता है वैसे ही विचार भी बदलते हैं। इस प्रकार उपन्यास नाम प्रतीकात्मक दृष्टि से सार्थक है।

'इदन्नमम' अर्थात यह मेरा नहीं या यह मेरे लिए नहीं है, ऋषि परम्परा की परमार्थ मूलक संस्कृति का सूत्र है। इस सूत्र की अभिव्यक्ति मंदाकिनी के व्यक्तित्व और चरित्र के माध्यम से होती है। 'चाक' नारी की मुक्ति और उसकी सत्ता कायम करने के विरूद्ध संघर्ष कथा है। श्रीधर प्रजापति बच्चों के साथ पूरे गांव में चेतना फैलाने का काम करता है। सारंग उसके प्रति आकर्षित है।

'अल्मा कबूतरी' में भी मैत्रेयी पुष्पा ने जौहर को नारी के लिए अभिशाप बताया है। उन्होंने कहा कि आत्मघात जो पुरूषों के लिए पाप है, वह जौहर के रूप में सती के रूप में, स्त्रियों के लिए कैसे महापुण्य को हो जाएगा.....स्त्री नहीं मानेगी इस विधान को, कथाकार भी नहीं मानेंगी, क्योंकि अब स्त्री जान गई है इस नंगे सत्य को कि 'मर्द औरत के लिए नहीं, अपने लिए लड़ते है। '[13]

लेखिका ने भूरी, कदम भाई, अल्मा कबूतरी के माध्यम से नारी स्वांतत्र्य पर बल दिया है। कबूतरा जाति के लोग आपराधिक गतिविधियों में लीन रहने के कारण घर से दूर रहते हैं और महिलाएं शारीरिक आवश्यकता पूरा करने के लिए पराये पुरूषों से संबंध बना लेती है। मैत्रेयी पुष्पा ने इन महिलाओं की जिजीविषा और पीड़ा को उपन्यास के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है। इस वर्ग के लोगों को अपराध के कार्यों में लिप्त करने को समाज जिम्मेदार है।

विंजन तमाम दावों, आंदोलनों, मुहावरों के बीच, स्त्री उपेक्षिता, की वास्तविकता है। यह वास्तविकता नेहा और आभा के जीवन में पढ़ी जा सकती है। दोनों नेत्र चिकित्सा में उच्च शिक्षित हैं, व्यक्तित्वान हैं, महत्वाकांक्षी हैं, सहयोगी हैं– मगर दोनों के जीवन का खलनायक है विवाह। 'विजन' विवाह जैसे कर्मकांड को भी कठघरे में खडा करता है। वस्तुतः अर्द्धांगिनी की अवधारणा को झकझोर कर लेखिका ने पाठकों को उद्वेलित किया है। स्त्री अपनी सारी तेजस्विता/योग्यता/परिवर्तित मानसिकता के बावजूद इसी अवधारणा के पहाड़ से टकराकर हर बार बिखर रही है।

डॉ0 नेहा शरण आई सेंटर में सर्जन है, मगर वह अपने आपको अनुज्ञा ढोने वाली दासिन मानती है। उसके ससुर और पति की आज्ञा का पालन करना पड़ता है। ससुर जी तो डॉ. नेहा को स्वागत कक्ष में बिठाना चाहते हैं ताकि मरीजों को प्रभावित किया जा सके। ससुर डॉ0 रामप्रकाश शरण कहते है – बेटी, तुम बाहरी काम संभालों। वैसे भी औरतें स्वागत करने में माहिर होती है।"[14] ससुर ने जब सामान्य परिवार की नेहा को बहू बनाने का प्रस्ताव किया तो वह लुटेरों के दल में एक नया सदस्य शामिल कर रहे थे। नेहा की इच्छा के विरूद्ध उसका विवाह हो जाता है और एक बेटे को भी जन्म देती है। ओ.टी. में पति और ससुर ने एक मरीज की हत्या की है । पति मामले को सँभालने में "औरत" की मदद चाहता है– टेक एडवांटेज ऑफ योर वुमैन हुड (अपने स्त्री होने का फायदा उठाओ) डॉ0 नेहा के सामने धर्म संकट खड़ा हो जाता है। अपने मंगल सूत्र की लाज रखे या रोगियों के भले के लिए कार्य करें।

नेहा की आदर्श डॉ0 आभा की कहानी स्त्री विमर्श को और तीक्ष्ण करती है। सास बीमार है और ननद का ब्याह है और इन सभी की जिम्मेदारी डॉ. आभा पर छोड़ दी जाती है। आभा मजबूरी से टूटकर मुकुल से विवाह किया था। अब उसे बड़ी ननद चेतक का पाठ पढ़ा रही है जो राणा के इशारे को समझता था। वह कहती है– तुम भइया की आँख का इशारा नहीं समझतीं ? निहितार्थ यह है कि पति रूपी राणा प्रताप के लिए आभा चेतक है। राणा की पुतली फिरी नहीं तब तक चेतक मुड़ जाता था।"[15] कहने का भाव यह है कि डॉ. आभा को स्वतंत्रता नहीं थी। उससे तालमेल बनाने की अपेक्षा की जाती थी। आभा का समूचा संघर्ष एक आधुनिक नारी की जद्दोजहद है। मैत्रेयी ने विजन, विधिवत अनुसंधान करके लिखा है ।

मैत्रेयी ने ऑपरेशन को एक साधना, शल्य अनुष्ठान कहा है। यथा– "आभा दी का इशारा पाते ही मैं आँख पर चीरा देकर उसमें तीन छेद बनाती हूँ। पहले से पानी जाने की व्यवस्था की गई। दूसरे छेद के जरिए जब एंडोल्यूमानेटर आखिर छोर तक पहुँचाया तो आँख चन्द्रमा की भाँति जगमगा उठी। (जगमगाहट का करिश्मा पिछली ओर से है। मेरा मन खिल उठा, जिस संसार से अब तक दूर का संबंध था। उस में भीतर करके इस चक्राकार मंडल को भेद सकते हैं। मैं तीसरे छेद की ओर बढ़ने वाली हूँ। आगे चलने के पहले सैनिक की तरह डॉ0 आभा का निर्देश चाहती हूँ। आँख की रौंदती हुई कील की ओर किस तरह बढ़ना होगा ? इससे पता लगाना है कि मैत्रेयी की ऑखों की सर्जरी का पूरा ज्ञान था।

शास्त्रों में कही गई बात हमारे लिए उपयोगी होती है, किन्तु हमें व्यावहारिक बुद्धि से काम लेना चाहिए। कही ईसुरी फाग की कथा लेखिका मैत्रेयी पुष्पा बडे साहस, निष्ठा और ईमानदारी से अपने जीवन–अनुभवों से समस्याओं का व्यावहारिक हल ढूँढती है। लेखिका का अपने निवास बुंलेखंड को कभी नहीं भूलती, उसे आषाढ़ का एक दिन नाटक के कालिदास की तरह और जब उसे हटकर लिखना चाहा तो रचना प्राणवान नहीं हुई। उसने इस रचना में सरस्वती देवी, बसारी लाल, बउ तलसीराम, ओरछा के गाइड शालिगराम कटारे, सागर जिले की पथरिया गाँव की बेड़िती करिश्मा और बूढी संगीत साधिका अनवरी बेगम के माध्यम से नारी जाति की पीड़ा व्यक्त की हैं। यह उपन्यास स्त्री–पुरूष के दुखद संबंधों और स्त्री की वेदना की कहानी है। यह स्त्री के साहस संघर्ष और मुक्ति की गाथा है।

उपन्यास की समूची कहानी शोध छात्रा ऋतु और उसके रिसर्च गाइड डॉ0 पांडेय की परस्पर विरोधी निगाहें और असहमतियों के सिलसिलों की कहानी है। उन्होंने इसके साथ रजऊ और ईसुरी के जीवन के अंतिम फैसलों और उनसे उपजी परिणतियों तक भी ले जाकर चित्रित किया है। रजऊ बागी योगिनी का बाना धारण करती है, महिला खुफिया सेना का अंग बनती है, उसी तरह कुँवर आदित्य के साथ जाना हथेली में रखकर कुर्बान हो जाती है और पुरूष ईसुरी अपना संतुलन खो सा बैठते हैं। फगवारे ईसुरी की यह कचोट और तड़प सूखी कठोर जमीन पर अपना फन पटकते हुए उस नाग की है, जिसकी मणि जैसे छीन सी गई हो पर यह भी कहीं उसी पुरूष–दंभ का पराजय–रूदन तो नहीं है, जो स्त्री की अनंत संभावनाओं के नकार और अस्वीकार पर भी नहीं बल्कि उसके द्वारा रची संस्कृतियो के छद्मों में भी गूँथी जा रही हैं।

बुंदेलखंड में ईसुरी फागें वहाँ की संस्कृति के नियामक तत्व हैं। लोक संस्कृति में ईसुरी फाग की परम्परा है। कहावत है–रामायण तुलसी कही सूरदास ज्यो राग, ऐसे ही कलिकालि में कहीं ईसुरी फाग।। ये सारे फागो, रजऊ नाम की स्त्री को संबोधित है।

मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास, कहीं ईसुरी फाग, काल्पनिक रजऊ और वास्तविक ईसुरी के प्रेम का बयान है। लेखिका काल्पनिक पात्रों के माध्यम से प्रेम का महत्त्व बता रही है। प्रेम किस तरह व्यक्तित्व को बदलता है, उसे सक्रिय बनाता है। साथ ही ईसुरी की तरह तोड़ता भी है। ऋतु रजऊ और ईसुरी पर शोध करती है। लेकिन उसका शोध प्रबंध हिन्दी –विभाग द्वारा अस्वीकृत किया जाता है। ऋतु माधव नाम के एक युवक से प्रेम करती है, जो ईसुरी–रजऊ की कहानी ढूँढने में उसके साथ है, लेकिन बाद में पारिवारिक दबावों की वजह से उसे छोड़कर चला जाता है। लेखिका ने उपन्यास में रजऊ–ईसुरी फाग मंडल की कल्पना की है। इसमें सरस्वती मीरा सिंह, गंगिया बेड़नी, करिश्मा बेड़नी, आबादी बेगम, अनवरी बेगम शामिल है। इस तरह उपन्यास बुन्देलखंड की लोक संस्कृति के साथ लोक–स्मृतियां सुरक्षित रखने वाले स्थानों की सैर भी कराता है।

उपन्यास की खासियत यह है कि यह ईसुरी की कविता के (फाग) मर्म को उद्घाटित करता है। ईसुरी उस काल के कवि है, जिसे हिन्दी कविता में रीति काल कहा जाता है, वे किसी राज दरबार से जुड़े कवि है।

हालॉकि उपन्यास के केन्द्र में ईसुरी हैं, लेकिन उपन्यास खत्म होते होते रजऊ इसकी केन्द्रीय चरित्र बन जाती है। ईसुरी प्रेमी बनकर फगवारे रह जाते है। रजऊ का प्रेम उन्हें भी बदलता है। एक जगह वे स्वीकार करते हैं कि रजऊ के प्रेम ने ही मुझे फाग रचने के लिए प्रेरित किया था।

'झूलानट'– एक छोटे से परिवार की कहानी है। एक जुझारू माँ, दो बेटे और एक उतनी ही जुझारू बहू के इस परिवार में संबंधों के समीकरण बेहद उलझे हुए हैं। बड़ा बेटा थानेदार (सुमेर) है और उसके रौब के कारण शीलों (पत्नी) से उसकी पटरी नहीं बैठ पाती है और वह दूसरी शादी कर लेता है। सास अपने छोटे बेटे बालकिशन को शीलों की कमान संभाल देती है। शीलों अपने देवर के साथ रहते हुए भी अपने पति की सम्पत्ति पूरा अधिकार रखती है। शीलों अपनी सास, देवर और पति को अपने चंगुल में फसांकर रखती है। शीलो की सास अपने बेटे की नौकरी बचाने के लिए अपने छोटे बेटे बालकिशन को शीलों के साथ रहने को तैयार करती है। सास–बहू के स्टाइलिश पात्र की जुगलबंदी के लय–ताल तो अपने हैं पर वे बजे हैं बालकिशन (के वाद्य) पर ही। उनकी ताने छूटती हैं, उसी के लिए और टूटती है उसी पर। वह उनका आधार भी है और माध्यम भी एवं असरदार भी। असल में कर्ता तो ये दोनों ही है, पर भोक्ता है मात्र बालकिशन। इन्हीं के बीच कृति का नाम 'झूलानट' सार्थक होता है। सास–बहू झूलती है, बालकिशन नट की तरह घटनाओं को देखता रहता है। बालकिशन एक तरफ शीलों के चंगुल में है दूसरी तरफ माँ की बातों का असर भी है। माँ से उसका सम्बन्ध आत्मिक है । शरीर से निःसृत बच्चा देह से अलग न उपर उठकर आत्मा के सूत्र से गुंथा–जुड़ा रहता है। सब कुछ के बावजूद संस्कारक सम्पन्न संबंधों में यह बचा रहता है। बालकिशन अपनी माँ और शीलों के बीच पिसता रहता है–

'इन दोनों के चलते मुलजिम हूँ मैं । अपराधी हूँ या कि शिकार ....? दोनों के चलते टुकड़े–टुकड़े काटा गया बालकिशन। टुकड़ों में से बड़ा हिस्सा झपटने वाली बिल्लियों की तरह दो स्त्रियाँ.....?

माँ के लिए मन में ऋद्धा है, तो शीलों के लिए प्रेम का मादन भाव। दोनों झूलानट, बना लटका बालू। मंदिरों में पहुँचा।

मंदिर की आस्था और प्रेम तो बेजान है। उसमें प्राण फूँकते हैं माँ व शीलो (जैसे अपनों) के प्रेमभाव। इसी के बीच रहना है। चाहे कितने भी हिचकोले खाएँ, झूलें, लटके, पर झुलानट की मुक्ति, संतोष, गति व नियति इसी झूले में है– जीवन का झूला। उस पर झूलते– झूमतें– लटकते सभी 'झूलानट'।

'कस्तूरी कुंडल बसै' की प्रमुख जटिलता माँ और बेटी का प्रतिपक्ष है। यह अजब विरोधाभास है– बेटी के मन का सच माँ के मन का सच हो यह जरूरी तो

नहीं।'[16] मैत्रेयी पुष्पा के उस आत्म वृतांत में माँ और बेटी के अन्तर्द्वन्द्व न टकराहट के कई आयाम है। यह टकराहट एक विधवा स्त्री और कुँआरी युवती के भिन्न स्त्री–परिपेक्ष्य की भी है। यह नारी मुक्ति का भिन्न चेतना का सवाल है।

कस्तूरी अपनी पुत्री मैत्रेयी को पुरूषों के समकक्ष बनाना चाहती है। बाल स्त्री के शृंगार माने गये हैं वह उन्हें छोरी सा मूँड देती है। वह उसके नाक–कान छेदे जाने की भी विरोधी है, उसकी दृष्टि में यह लड़की को गुलामी के लिए तैयार करना है–'लड़की को छेद–बांधकर गुलामी के लिए करना है।'[17] वह मैत्रेयी को काजल व चिकनाहट से दूर रखती है। लेकिन मैत्रेयी के मन में सवाल है कि क्या हक है उन्हें उसके रूप को बरबाद करने का । माँ अपनी ही तरह बेटी को क्यों रखना चाहती है ?'[18] मैत्रेयी पढ़–लिखकर भी नौकरी नहीं करना चाहती। वह माँ से अपनी शादी करने का आग्रह करती है। वह दूसरों की हवस का शिकार नहीं होना चाहती। मैत्रेयी के ये विचार उसकी वैचारिक पौढ़ता को दर्शाते है। वह स्वीकार करती है कि "मैंने विवाह का फैसला किसी अल्हड़ रसवंती लड़की की तरह नहीं लिया था, खासी प्रौढ़ भावना से लिया गया निर्णय था। .....मैंने इसे अपनी मुक्ति का रास्ता मान लिया है। ₹[19]

'मैत्रेयी एक विधवा माँ की पुत्री थी। उसे बचपन से ही अपने सहपाठियों, सड़क पर ट्रक चलाने वाले ड्राईवर, गोश्तमंडी के कासिम कसाई और डी.बी. इंटर कॉलेज के प्रिंसिपल से लेकर क्लर्क तक की गुस्ताखी का सामना करना पड़ा था। माँ अपनी बेटी पर अभद्र हमलों को नजर अंदाज करके अपनी बेटी को सुरक्षित समझती रही। मैत्रेयी को बचपन में भी गौरा रात्रि में माँ के पास से उठाकर दूसरे पलंग में डाल देती थी। इससे गौरा मैत्रेयी को साँपिन सरीखी लगती है। वह कहती है –'माँ से कौन–सी सीख लूँ ? यही न कि मर्द की जगह कोई औरत ढूँढ लूँ।'[20]

मैत्रेयी ने अपनी माँ को भी नौकरी करते हुए दूसरे मर्दों की कृपाकांक्षी होते देखा है। इसलिए मैत्रेयी को नौकरी से घृणा हो जाती है और वह शादी में 'अपनी मुक्ति का रास्ता, तलाशती है। मैत्रेयी ने देखा है कि आर्थिक रूप से आत्म निर्भर होकर भी कामकाजी औरतों की अपनी कोई स्वतंत्र पहचान नहीं हैं। वह कहती है– इस समाज में वे मनुष्य तो क्या औरत भी नहीं, रॉंड है, विधवा बस। ऊपर से निपूती– पुरूषों जैसे काम करने से पुरूष जैसी नहीं मान ली जाती स्त्री। सामाजिक कार्यों के चलते उसे किसी पुरूष की जरूरत होती है, भले ही वह पाँच साल का हो।'[21]

मैत्रेयी की माँ जब उसके रिश्ते के लिए जाती है तो लड़के वालों को किसी महिला का रिश्ते के लिए आना अच्छा नहीं लगता है। माँ को बेटी अपने पाँवों की बेड़ी लगती है और बेटी को माँ से घृणा होने लगती है। वह अपने बचपन भी उपेक्षा को लक्ष्य करके कहती है–'अकेली निस्सहाय औरत की अपेक्षा अकेला बच्चा कई गुना असहाय होता है।'[22]

मैत्रेयी यह भी जानती है विधवा स्त्री के जीवन में पुरूष आते ही वह खूँखार हो जाती है। कस्तूरी और गौर सच्ची साथिन थी। मैत्रेयी इनके माध्यम से विधवा जीवन की सच्चाईयों को उजागर करना चाहती है। वह कहती है – विधवा को प्यास नहीं लगनी चाहिए तो क्या लगती भी नहीं ? भूख प्यास अच्छे कपड़ों की ललक सब निषेध है। निषेध तोड़ने की इच्छा नहीं हुई ?"[23]

दरअसल कस्तूरी और मैत्रेयी का टकराव माँ और बेटी का टकराव न होकर दो स्त्रियों की अस्मिता का टकराव है। गौरा ने मैत्रेयी का बचपन छीना था और अब उसका यौवन भी छिनने जा रही है। इस कारण मैत्रेयी में उसकी प्रति घृणा का भाव है। वह यह भी मानती है कि स्त्री की देह उसकी है और पुरूष को उसकी इच्छा का ध्यान रखना चाहिए। वह अपने पति से भी कहती है –"मर्द की कूबत नहीं थी तो ब्याह क्यों किया ?"[24] सतमासी बेटी पैदा होने पर पति की स्थिति पर प्रतिक्रिया करते हुए कहती है –जो पुरूष स्वयं उस बच्ची का पिता होने में हिचक मान रहा है, उसे वह पति भी कैसे माने?"[25] यह मैत्रेयी पुष्पा के "बोल्डनेस" लेखन का परिणाम है। वह कभी पति पर और कभी माँ पर वार करती है। माँ की यौन कुंठा और अपनी स्त्री चाहत के द्वन्द्व को जिस नैतिक प्रमाणिकता के साथ मैत्रेयी ने अभिव्यक्ति दी है वह "कस्तूरी कुंडल बसै" के स्त्री विमर्श को नया अर्थ गांभीर्य प्रदान करता है।

यह आत्मकथात्मक उपन्यास लेखिका मैत्रेयी पुष्पा के बचपन से प्रौढ़ अवस्था तक के जीवन का जीवंत दस्तावेज है। इससे लेखिका के जीवन दर्शन को समझा जा सकता है। गंवई लड़की भी महत्त्वपूर्ण लेखिका किन परिस्थतियों में बनती है। वह ब्राह्मण परिवार में जन्म लेती है किन्तु अहीर व जाटों की छत्र छाया का प्रभाव है। वह कहती है कि 'मैं जन्म से ब्राह्मण, जाटों, अहीरों के अक्खडपन में उतरती चली जाती हूँ।'[26]

यहाँ यह तथ्य भी विचारणीय है कि मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण पृष्ठभूमि से होते हुए निम्नवर्गीय पक्ष को वाणी दी है। वह स्वयं भी इसकी सहभोक्ता रही है।

'कस्तूरी कुंडल बसे' आत्मकथा एक तरह से अपनी माँ कस्तूरी से मैत्रेयी के मुक्त होने की दशा है। कस्तूरी और मैत्रेयी माँ–पुत्री के रूप में एक दूसरे से जुड़ी हुई है वहीं 17 वर्ष की उम्र में बी0ए0 में पढ़ने वाली मैत्रेयी माँ से अपनी शादी का आग्रह करती है। कस्तूरी परम्परागत नारी है लेकिन मैत्रेयी सुशिक्षित युवती है। मैत्रेयी ने यह साबित भी कर दिया है कि 'एक नहीं दो–दो मात्राएं, नर से भारी नारी मैत्रेयी, परम्परागत रूढ़ि, अंधविश्वासों को नकारती हुई आधुनिक स्त्री बन जाती है। मैत्रेयी को माता की दाम्पत्य विरोधी, हरकते भी पसंद नहीं है। मैत्रेयी को स्त्री होने का दुःख नहीं है। वह स्वाभिमान पूर्वक जीना चाहती है। वह महिलाओं के स्वाभिमान के लिए लड़ना चाहती है। अपनी जैविकता को स्वीकार करने का साहस मैत्रेयी को अन्य स्त्री उपन्यासकारों से विशिष्ट बनाता है।

मैत्रेयी पुष्पा ने बिना किसी लाग लपेट के स्वतंत्रतापूर्वक अपनी बात कहीं है। स्त्री को पुरूष के समकक्ष दर्जा देना चाहती है। उनके मतानुसार कस्तूरी की गंध स्त्री और पुरूष की समकक्षता की नाभि में निवास करती है। 'कस्तूरी कुंडल बसै' भारतीय स्त्री की दो

पीढ़ियों की कारागर कथा है। कारागार की कई सामाजिक दीवारें कथा–लेखिका की माँ कस्तूरी तोड़ती है, पर अपने वैधव्य से आक्रांत वह अपने लिए अनेक मनोवैज्ञानिक दीवारें खड़ी कर लेती है और उनकी जिद में वह अभी बेटी मैत्रेयी को भी खींच लेना चाहती है। मैत्रेयी को दो–दो कारागार तोडने पड़ते है। अपनी माँ का बनाया हुआ कारागार और अपनी स्त्री जैविकता का कारागर । वह अपना साहस सामर्थ्य और स्वातंत्र्य सिद्ध भी करती है। इस अभियान में उन्हें अपने पति का सहयोग भी मिलता है। कथा का अंत बेहद प्रतीकात्मक है। वह अपनी बेटी को बांहो में साधे सीढियाँ चढ़ रही है। छत पर पहुँच आकाश का अनंत विस्तार अपनी बच्ची को दिखा रही है। उसे लगता है घर का कारागार टूट रहा है । कस्तूरी अब किसी कुंडल में कैद नहीं रहेगी। स्त्री की कस्तूरी अब उसकी शिक्षा, स्वाभिमान, उसके सामर्थ्य, उसके स्वातंत्र्य और उसके साहस में है। मैत्रेयी कहना चाहती है कि स्त्री की मुक्ति पुरूष से मुक्ति में नही : उसकी आत्मदया की भावना, पुरूष से स्वयं को हीन आँकने की ग्रंथि उसके मनुष्य से एक दर्जा नीचे रहने की साइकी से मुक्ति में है।

'कस्तूरी कुंडल बसै' मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा ही है। कस्तूरी हिरण की नाभि में बसती है लेकिन अज्ञानतावश गंध में मदमाता दुनिया भर में उसे ढूँढ़ता भटकता फिरता है, वैसे ही मैत्रेयी को भी इसे समझने में थोड़ा वक्त लगता है कि स्त्री की अस्मिता, उसकी पहचान, संरक्षण और विकास के लिए उसे कहीं दूर नहीं जाना है। कस्तूरी दो भाईयों के बीच की बहिन है। लगान के डर से जिसका बाप घर छोड़कर भाग चुका है। उसकी सहेली रामश्री ही उसकी गुरू है। किताब की लग्न उसे उसी से लगी है। पढ़ो, सोचो और अपने पाँव पर खड़ी हो जाओ" का जो गुरू मंत्र वह आगे चलकर मैत्रेयी को देती है, उसके मूल में कहीं न कहीं रामश्री ही है। उसकी और उसकी किताबों की संगत में ही कस्तूरी धीरे–धीरे मर्दों की इस दुनिया में खड़े होने लायक बन सकती है।

कस्तूरी एक कड़ियल और बेहद जिद्दी किस्म की औरत के रूप में सामने आती है। भले ही वह अभागिन सतमासी होकर जन्मी हो, वह ऐसी मिट्टी से नहीं बनी है, जिसे कोई रूँध ले। उसके पैदा होते ही बड़े भाई की मृत्यु हो जाती है। कस्तूरी बड़ी होने पर शादी करने से मना करती है लेकिन परिवार के दबाव के आगे उसे शादी करनी पड़ती है। वहाँ उसे पता चलता है कि वह 800 रूपयों में खरीदी गई घोड़ी है। उसकी भाभी के झांझन–कड़ों का रहस्य उसे पता लगता है। भाभी उसे जीवन की सच्चाईयों से परिचित कराती है–"लाली, किताबों में क्या पढ़ती हो ? उसमें यहीं लिखा है कि जिन्दगी अन ब्याहे की काट दो और भारी सिल की तरह भइयां की छाती पर लदी रहो। यह कहीं नहीं लिखा है कि बेटी धान का पौधा होती है, समय से दूसरी जगह रोप देना ही अच्छा होता है। बखत निकल जाता है, पौधा मरने लगता है, जड़े सूख जाती हैं।'[27]

कस्तूरी के जीवन में दाम्पत्य सुख नहीं था। वह जल्दी विधवा हो जाती हैं। वह अपनी एक बेटी के लिए थोड़ा बहुत पढ़ लिखकर नौकरी करती है। मर्दों की इस दुनिया में एक दबंग, कड़ियल और बेहद जिद्दी औरत के रूपमें रहती है। वह अपनी बेटी को भी लड़कों के समान रहने का आग्रह करती है। आदमी की बुरी नियत से बचने का आग्रह करती है। यह बात गाँठ में बाँध ले कि मर्द की जात से होशियार रहकर चलना होता है, भले ही वह साठ साल का बूढ़ा हो।"[28]

कस्तूरी द्वारा मैत्रेयी के रिश्ते के लिए प्रयास करना भी पुरूष समाज को स्वीकार्य नहीं है। मैत्रेयी वर्जनाओं वाली दुनिया के बारे में लिखती है–"उन दिनों बार–बार मन में सवाल उठता था, वह कौन सा संसार है, जहाँ लड़की अपनी इच्छा से जीवन साथी चुनती है ? विश्वास अर्जित करने का अवसर पाती है? हम इस अंधी–बहरी दुनिया के वाशिंदे है, जहाँ उम्र आने पर एक पुरूष का हाथ थमाकर कह दिया जाता है कि यह तुम्हारा पति है, परमेश्वर है।"[29]

मैत्रेयी पुष्पा सामाजिक रूढ़ियों, कुरीतियों, परम्परागत सोच में बदलाव के लिए साहित्य का सहारा लेती है। स्त्री विरोधी दृष्टि और व्यवहार के विरूद्धवे साहित्य के रचनात्मक उपयोग की ओर प्रवृत होती हैं। डॉ0 पति भी मैत्रेयी पर संदेह करता है वह मौहल्ले–बस्ती के लड़कों के बारे में कुरेद–कुरेदकर पूछता है। पति द्वारा पत्नी का इस तरह आगा–पीछा खँगालना उससे बर्दाश्त नहीं होता। पहली रात में ही वह अपनी उग्र प्रतिक्रिया व्यक्त करती हुई पति से कहती है –"क्यों छिपाऊँगी ? तुम्हारा डर लग रहा है क्या ? मुझे तुमसे ज्यादा ताकतवर और तंदुरूस्त लड़कों से डर नहीं लगा।"[30] मैत्रेयी निडर और साहसी है। वह अपने पति को भी अपने वैयक्तिक संबंधों के बारे में खुलकर बताती है। मैत्रेयी की माँ ने उसे संदूक भर किताबें दी थीं। सिंगार – पटार, बिंदी–महावर से बचकर नई राह गढ़ने की हिदायत भी दी थी। उसने कहा था– सौ बातों की एक बात, अपना आना–जाना अपनी इच्छा से करना। पति तो अपनी सुविधा से भेजेगा और लिवाने चला आएगा।[31] अपने ग्राम्य और पति के अभिजात संस्कारों के बीच उसे एक गहरी खाई दिखाई देती है।

मैत्रेयी पुष्पा ने यह आत्म कथा प्रथम पुरूष में न लिखकर तृतीय पुरूष की शैली में लिखी है। वस्तुतः यह आत्मकथा में आत्मत्व के निषेध की शैली है जो उन्हें आत्म से निकाल कर एक वृहत्तरलोक से जोड़ती है। इस आत्म कथा के कुछ प्रसंग मैत्रेयी पुष्पा के जन्म से पूर्व के हैं। जिनकी वास्तविक साक्षी वह नहीं है। ऐसे प्रसंगों को आत्म–वृतांत की शैली में नहीं लिखा जा सकता था। 'कस्तूरी कुंडल बसै', मैत्रेयी पुष्पा की व्यवस्थित और क्रमबद्ध आत्मकथा के रूप में लिखित नहीं है। मैत्रेयी इसके माध्यम से पुरूष वर्चस्व वाले समाज की असलियत सामने लाती हैं। चामुंडा की मूर्ति में कमल लक्ष्मी का जो दर्शन उसने अपनी मां कस्तूरी में किया है, वही स्त्री चेतना का सार बनकर उभरता है।

सिमोन द बोउआ के मतानुसार स्त्री पैदा नहीं होती बनाई जाती है यानी आज जिस स्त्री को जानते है वह जैविक से बनने की कथा है। मैत्रेयी पुष्पा भी एक ऐसी ही स्त्री है, जिन्हें समाज ने बनाया और उससे अधिक उन्होनें अपने आप को बनाया। लेखिका ने अपने

स्कूल व कॉलेज के दिनों की मुठभेड़ में पाया कि अकेली, लड़की को अकेले स्थान पर किसी पुरूष के साथ नहीं जाना चाहिए। यहाँ तक कि चाहे शिक्षक या प्रिंसिपल ही क्यों न हो।

लेखिका को अपने प्रारम्भिक रचना काल में अनेक परेशानियों का सामना करना पड़ा । लगातार एक के बाद एक 3 बच्चियों की माँ बनने पर सामाजिक तानों का सामना करना पड़ा। डॉ0 साहब के दूसरे विवाह की तैयारियाँ भी की जाने लगी। इन सबके बावजूद मैत्रेयी अपनी बच्चियों के प्रेरणा से लेखन कार्य करती रही। एक संपादक ने एक कहानी छापी फिर मुँह फेर लिया। एक सज्जन संपादक ने लेखिका की कहानी लगातार छाप कर उन्हें रचनाशीलता के प्रति आश्वस्त किया। हंस के सम्पादक राजेन्द्र यादव की प्रारम्भिक उपेक्षा के बाद मैत्रेयी पुष्पा को लेखन को विकसित करने में सहयोग दिया। यहाँतक मैत्रेयी के पति डॉ0 साहब मैत्रेयी और राजेन्द्र यादव के संबंधों को शक की नजर से देखते हैं। कसम खाती हो, उनसे तुम्हारा यही रिश्ता है?

लेखिका को यहां तक कहना पड़ता है– गंगाजली उठाऊँ और कोई विश्वास भी करे, ऐसी मुझे दरकार नहीं। "गुड़िया भीतर गुड़िया'' का सारभूत निष्कर्ष भी यही है कि "स्त्री पुरूष समाज की निजी सम्पत्ति है, लेखिका ने तन–मन–धन से इस रूढ़ि का प्रतिवाद किया है।

मैत्रेयी ने अपने उपन्यासों में ग्रामीण परिवेश की महिलाओं को चित्रित किया है। "गुड़िया भीतर गुडिया में खेरापतिन दादी को याद करती हुई वे लिखती है– खेरापतिन दादी कहतीं है– गीत नए नहीं करोगी, उनमें फफूँद लग जाएगी।" दादी सीता को लंका जाने को भी नये संदर्भों में देखती है। सीता की अग्नि परीक्षा पर दादी कहती है–"बेटी साँच को अग्नि ने न तपाया जाए तो झूंठ जिंदा कैसे रहे? बस यही अग्नि परीक्षा थी। नही तो आग की लपटों में बैठकर कोई जिंदा बचा है?

मैत्रेयी ही हैं जो पुरूष वर्चस्वी भारती समाज और उसकी कथित संस्कृति के सांस्कृतिक अत्याचारों पर अपने लेखन में गहरा विमर्श करती हैं। उनका यह विमर्श आधुनिक समाज विज्ञानों और पुरातन साहित्य में उस संधि बिंदु पर घटित होता है, जहाँ से सामाजिक इतिहास की प्रस्थानकारी करवटें साफ–साफ दिखाई देती है।

मैत्रेयी ने अपनी आत्मकथा और उपन्यासों के माध्यम से यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि ग्रामीण स्त्रियाँ परिश्रमी, साहसी और खुले विचारों की होती है। इदन्नमन की मंदा चाक की सारंग, अल्मा कबूतरी की अल्मा व कही ईसुरी फाग की रजऊ इसके ज्वलंत उदाहरण है। मैत्रेयी पति को जीवन साथी के रूप में मान्यता देती है उसकी गुलामी उसे पसंद नहीं है। वह मानती है कि पुरूषवादी समाज महिला को अत्यधिक स्वतंत्रता नहीं देना चाहता है। सदियों से चली आ रही परम्परा आसानी से बदलना संभव नहीं है। चाक उपन्यास की सारंग अपने प्रेम को समाज, धर्म और जाति खाँचों में ढालने की उत्सुकता नहीं दिखाती। यह प्रेम उसके लिए पाप नहीं है, उसकी भाव सत्ता का विस्तार है।

मैत्रेयी पुष्पा के मतानुसार महिला परिवार तो चाहती है, जहाँ उसे बुनियादी लोकतांत्रिकता प्राप्त हो। चाक उपन्यास के हवाले वे लिखती है– यह कथा एक ऐसी स्त्री की आत्म स्वीकृति का आख्यान है, जो रिवाजों को स्त्री के लिए स्त्री की तरह बदलना चाहती है, वह भी स्त्री के उद्धार के लिए, उसके कर्मक्षेत्र के विस्तार के लिए।"

मैत्रेयी पुष्पा अपने लेखकीय संकल्पों को व्यक्त करती हुई कहती है–"मैं लिखूँगीं, सिकुर्रा की स्त्रियां न मीरा है महादेवी , वे हैं चंदना और कला गीत कथाओं की स्त्रियाँ .....वे अदृश्य के आलंबन रच पाई न ईश्वर की अदृश्यसत्ता का सहारा लिया। "मैत्रेयी की पहचान ऐसी संघर्षशील नारियों के कारण है। आजाद भारत में संसद और विधान सभा में संवैधानिक प्रवेश के लिए 72 वर्षों से महिला संघर्ष कर रही है। हिन्दी उपन्यासों में महिलाओं का सही चित्रण समय की आवश्यकता है। महिला दुश्मन के हमले के समय और अपने पुरूष की कमजोरी के वक्त हिम्मत दिखाती है। स्त्री का दुर्गा के रूप में चित्रण उसकी शक्ति का प्रतीक है। प्रेमचन्द ने होरी से अधिक धनियां को अधिक संघर्षशील चित्रित किया है। मैत्रेयी ने अपने लेखन के दौरान महसूस किया है कि संसार में हर जगह पिंजरे बने हुए है बाहर निकलने का प्रयास करना चाहिए।

मैत्रेयी जिसे ह्रदय से स्वीकार करती है उसे ही रचनाओं में महत्त्व देती है। वह अपनी रचनाओं के माध्यम से सत्य को स्थापित करना चाहती है। वह कहती है 'न्याय नहीं कर पाऊँगी, तो लिखती क्यों हूँ.....तब फिर जो लिखूँगी, सच ही लिखूँगी, बेशक जिसे देखकर खुद सन्न रह जाऊ और सजा भी मिले।" संसार का इतिहास गवाह है सजा, हमेशा सच बोलने वाले को मिली है। चाहे सुकरात हों, मीरा बाई या फिर गांधी। झूंठ की हाँ में हाँ मिलाने वाले पहले भी मौज मारते रहे हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने ईमानदारी से ग्रामीण परिवेश की स्त्री का चित्रण किया है। अल्मा कबूतरी में बीहड़ों के जीवन का चित्रण उन्होनें पूरी ईमानदारी से करने का प्रयास किया है। कस्तूरी कुंडल बसै, और गुड़िया भीतर गुड़िया, आत्मा कथा में मैत्रेयी ने नारी जीवन को पूरी तरह खोलने का प्रयास किया है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी बेटी, दामाद, नातिन, पति के साथ संबंधों का खुला वर्णन किया है।

मैत्रेयी पुष्पा ने पुरूषवादी समाज द्वारा नारी के विरूद्ध आवाज उठायी है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपमान शोषण के विरूद्ध आवाज उठायी है। मैत्रेयी पुष्पा स्वयं नारी है और नारी की पीड़ाओं का यथार्थ चित्रण किया है। मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यासों के साथ ही कहानी संग्रहों में भी नारी की पीड़ा को व्यक्त किया है। चिन्हार के बाद ललमनियाँ की दस कहानियाँ भी स्त्री की पीड़ा से संबंधित है।

अपनी आत्मकथाओं में डॉक्टर बेटी से कहती है– यह परिवार उस समाज का हिस्सा है बबली, जहाँ औरते केवल शरीर के रूप में होती है, जो पुरूष की सेवा सुविधा के लिए श्रम कर सके। इसके अलावा वे योनि रूप में रहती है कि पुत्रवती होकर वंशबेल बढाएँ बेटी पैदा करें तो अगली पुरूष पीढ़ी के काम आएँ।"[32] कहने का भाव

यह है कि महिला को पुरूष के बराबर का दर्जा समाज में नहीं है।

मैत्रेयी पुष्पा कहती है–"शहरी स्त्रियों से पहले ग्रामीण औरत को अपनी गुलामी का अहसास हुआ है। किसान पत्नी, ग्रामीण नाइन, धोबिन, गडरिया औरत आदि की स्थिति दयनीय है। ये स्त्रियाँ ही जानती है कि 'मुक्ति फूलों से सजे रास्ते से नहीं आती। कोई मंदा, कोई मुनिया ही बनाएगी इस राह को, जिन्होंने प्रेम और साहस को अपना स्थायी भाव बना लिया है।'

मैत्रेयी औरत को सहनागरिक का दर्जा दिलाना चाहती है। विवाह संस्था को वह पूर्णतः पुरूषवादी मानती है। वे पूछती है कोई बताए, विवाह की इस धांधली भरी मर्यादा में स्त्रियाँ अपना जीवन आँखे मूँदकर क्यों झोंके ? अब तो मान लीजिए कि विवाह की पवित्रता जिन्दगी का सबसे बड़ा धोखा है। पुरूष के लिए तो यह अनिवार्य है ही नहीं, स्त्री भी इससे गुरेज क्यों न करें ? अतः व्यभिचार शब्द हमारे लिए बेमानी है।[33]

मैत्रेयी पुष्पा का मानना है कि प्रेम पर केवल पुरूष का अधिकार नहीं है। महिलाएं भी पुरूषों से प्रेम कर सकती है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण परिवेश की पृष्ठभूमि से नारी का यथार्थ चित्रण करते हुए शहरी जीवन की नारी चुनौतियाँ का अपने उपन्यासों में वर्णन किया है। उनके लेखन का मूल उद्देश्य नारी को पुरूष के समकक्ष सम्मान का दर्जा दिलाना रहा हैं।

पाद टिप्पणी

1. *मैत्रेयी पुष्पा स्त्री होने की कथा – सं0 विजय बहादुर सिंह पृ0 57*
2. *वही पृ064*
3. *वही पृ066*
4. *वही पृ093*
5. *वही पृ0128*
6. *चाकः व्यक्तित्व रूपातंर की विश्वसनीय गाथा– रेखा अवस्थी–पृ0142*
7. *चाक– पृ088*
8. *वही पृ0225*
9. *वही पृ0 93*
10. *वही पृ0 214*
11. *वही पृ064 413*
12. *वही पृ0 417*
13. *अल्मा कबूतरी–मैत्रेयी पुष्पा–पृ0 115*
14. *विजन– मैत्रेयी पुष्पा –*
15. *विजन– मैत्रेयी पुष्पा*
16. *कस्तूरी कुंडल बसै– मैत्रेयी पुष्पा– पृ0 123*
17. *वही पृ0 48*
18. *वही पृ0124*
19. *वही पृ0 16*
20. *वही पृ0 109*
21. *वही पृ0 72*
22. *वही पृ0 120*
23. *वही पृ0 140*
24. *वही पृ0 251*
25. *वही पृ0314*
26. *वही पृ0262*
27. *वही पृ0 16*
28. *वही पृ0 52–53*
29. *वही पृ0 132*
30. *वही पृ0 246*
31. *वही पृ0242*
32. *वही पृ0239*
33. *वही पृ0 71–72*